कहानी

हासिल

- **श्यामल बिहारी महतो**

मैं दफ्तर से अभी ही घर आया था, कि अचानक लुटा-पिटा चेहरा लिये सुकरा दा मेरे सामने आ खड़ा हो गया। सप्ताह दिन में ही देह सुख कर लकड़ी हो गई थी। जैसे उसके शरीर से किसी ने रक्त निचोड़ गरम धूप में सुखने को छोड़ दिया हो। खड़े खड़े जोर जोर से सांसें ले रहा था। लग रहा था अभी अभी रोया है और फिर रो पड़ेगा। पहले वाला सुकरा दा होता तो अभी तक मै उसे पास बैठा कर उसका सारा हाल समाचार पूछ लिया होता। घर में बैठ एक साथ हमने बहुतों बार चाय पी है, खाना खाएं थे। लेकिन आज उसी सुकरा दा के प्रति मेरे मन में कोई आदर भाव नहीं था। उल्टे मन में उबकाई आ रही थी।

शाम ढल चुकी थी और कमरे में अगरबत्ती की खुशबू फैली हुई थी। परन्तु सुकरा दा के कुकर्म की दुर्गंध उस खुशबू पर भारी पड़ रही थी। मैं थोड़ा एकांत चाहता था। अधूरे लेख को पूरा करना चाहता था। जिसे कल यूनियन की क्षेत्रीय बैठक की पटल पर रखना था मुझे- "कोलियरियों में मजदूरों की दशा और दिशा "

जिस कोलियरी में मैं कार्यरत था। उसी कोलियरी के खदान में सुकरा दा मलकटा (मजदूर) कोयला खदान में कोयला काटने वाला मजदूर था। इन्हें पीस रेटेड वर्कर भी बोला जाता था। जब भी वह आफिस में आता सुधीर बाबू कह मेरा मान सम्मान बढ़ाता रहता था और गांव में मैं उसे सुकरा दा कह उसकी इज्जत को चार चांद लगा देता था। बरसों से हम दोनों के बीच यही नाता रिश्ता चला आ रहा था।

पढ़ा तो वह चार क्लास तक ही था। परन्तु शिष्टाचार और भाई- बंधुत्व का पाठ उसने बचपन में ही पढ़ लिया था। था भी बहुत मेहनती। काम से कभी उसे भागते नहीं देखा। घर हो या खदान, खटता दम भर, खाता डूभा भर भात और सोता खटिया भर ! उसके घर परिवार में बड़ी शांति थी। दो बेटे और एक बेटी बस, यही उसका परिवार था। पहले बड़े बेटे की फिर पिछले साल बेटी की भी शादी कर दी थी उसने। दहेज देने के कारण गांव का सूदखोर मेघलाल से तीस हजार रुपए कर्ज लेकर थोड़ी चिंता मोल ले रखा था वह। लेकिन सुकरा दा में एक बात थी जो मुझे बेहद पसंद थी। दूसरों की तरह जुआ- शराब की लत में वह आज तक नहीं पड़ा था। और यही बात हम दोनों को आपस में जोड़े रखा था। मेरी तरह ही शराबियों से उसका भी पटता नहीं और जुआरियों के साथ वह कभी सटता नहीं था।

उसके घर में सभी यह मान कर चल रहे थे कि तीस हजार का कर्ज चुकाने में तीन महीने से ज्यादा वक्त नहीं लगेगा। पत्नी सुगिया देवी को अपने पति के जीवन शैली पर बड़ा गर्व था। अक्सर उसके मुंह से सुना जाता था -"हमर मरद जैसन भी है, बेस है ! दोसर घारे जायके दोसर के मुंह नाय चाटो हअ..!"

कथन में सच्चाई थी। सुकरा दा के साथ ही खदान में खटने वाले ऐसे कई थे, जो देर रात शराब की नशे में गिरते पड़ते घर पहुंचते थे। कई बार तो उनकी कमाई भी रास्ते में लूट ली जाती थीं। उनके घरों का माहौल भी किसी "सूअरबाड़" सा लगता, जहां चीख-पुकार और कुते कुतियों वाली गाली आम बात होती थी।

हमारे कोलियरी के रास्ते में एक प्राइवेट दारू अडड़ा पडता था। जिसके बाहर अक्सर मलवे के ढेर पर लड़ते कुतों की तरह शराबियों को हमने लड़ते देखा था। कितने तो ऐसे थे जो सुबह से ही उस दारू अड्डा के बाहर बैठे मिल जाते थे।

उसी रास्ते से सुकरा दा का भी हर दिन काम पर आना जाना होता था। लेकिन पलट कर भी कभी उसने उधर आज तक नहीं देखा था। काम से सीधे घर और घर से सीधे खदान। यही उसकी रूटीन थी। इस कारण भी वह हमेशा साथियों के बीच हंसी का पात्र बना रहता था। लेकिन वह कभी किसी की बात को बुरा नहीं मानता, उल्टे मुस्कुरा कर आगे बढ़ जाता था।

उस दिन भी वह तनख्वाह उठाया और दुलकी चाल से घर की राह पकड़ ली थी उसने।

अभी वह दारू अड्डे के करीब से गुजर ही रहा था कि मुरारी ने आवाज दी - "वो सुकरा दा...!"

उसके साथ दो तीन और भी बैठे हुए थे और पीने में मशगूल थे। उसने दुबारा आवाज दी "वो सुकरा दा, एक नजर इधर भी देखो न दादा,हम इतने भी तो बुरे नहीं है..!"

"नहीं,तुम लोग पीओ !"उसने कहा और पर रूका नहीं। इस पर बीरबल ने फब्ती कसते हुए कहा "अरे भाई, उसे क्यों रोकते हो? यह तो सीधे भौजी के पास ही जाकर रूकेगा। वही इसका भकभक अड्डा है। आखिर है तो मेहरारू का गुलाम ! यह वही करेगा जो उसकी मेहरारू कहेगी ..!"

"बड़ा दुख होता है यार,खटता-कमाता यह है, पर घर में हुकूमत इसकी बीवी की चलती है..!"दारू वहां बोलने लगा था इस पर सुकरा दा की बैचेनी बढ़ गई थी। अबकी वह रूक गया था। जाने क्यों ?

"ऐसे लोगों के कारण ही जोरू का गुलाम बात का चलन शुरू हुआ होगा ..!"इस बार नकुल कुरमी ने मुंह खोला था"जोरू के गुलाम के नाम एक पेटी और..!"

"जाओ सुकरा दा, देर होता देख कहीं भौजी यहीं न आ जाए -जाओ..!"किसी के मुख से निकला था।

जिंदगी में पहली बार सुकरा दा अपने गुस्से पर काबू न रख पाया और उस दिन साथियों की पंगत में बैठने से भी खुद को वह रोक नहीं पाया था।

फिर तो दारू का जो दौर शुरू हुआ तो देर रात तक चलता रहा। यहां तक कि सुकरा दा नशे में बेसुध हो एक ओर लुढ़क गया था..!

सुकरा दा के घर में उसकी पत्नी सुगिया देवी की चीखती आवाज सुन अगल बगल के लोगों ने जाना कि सुकरा दा ने आज पी ली है।

"कोने तोर मति हर लेलो, जे आइज घोड़ा के मूत पिकर आ गेलें ? दारू के गंध से ही दूर भागो हलेअं तोंइ आर आइज ओकरे पेट में भर लेलें ..?"

इसके बाद भी घर में भोर-भोर तक चख-चख होती रही !

दूसरे दिन लोगों की जुबान पर सुकरा दा ही चढ़ा रहा -"अरे, रमेसरा के बाप कहिया से दारू पीने लगा भाई..?"

“अरे, इसमें ताज्जुब की क्या बात है ! पहले कम पीता होगा, कल कुछ जास्ती पी गया..!"

“तभी कहूं, खदान में खटने वाला दारू नहीं पियेगा, ऐसा भला हो सकता है..?"

“ठीक कहते हो काका, अब बुधना को ही देख लो, कभी दारू नहीं पीता था,मांस भी नहीं खाता था, जब से कोयला चुरा कर बेचने लगा है,सब कुछ खाने पीने लगा है, सूअर का मांस तक अब मजे से खाता है..!"

“यह दारू पता नहीं और कितने घरों को उजाडेगी..!”पड़ोसी सोमर काका कि यह बात देर तक लोगों के कानों में गूंजती रही थी।

और सचमुच उस दिन के बाद सुकरा दा के घर में खुशी फिर कभी झांकने नहीं आई और न शांति के दो पल कभी देखने को मिले। यहीं से उस घर में तबाही का जो दौर शुरू हुआ तो बारूद का गोला फटने जैसा अंत हुआ।

हालांकि उस दिन के बाद से सुगिया देवी चौंकना थी। और पति को सुधारने की हर तरह की भागीरथी प्रयास करती रही। जहां पति को वह ऊंच नीच समझाती रही, आंगन की तुलसी पिंडा पर हाथ रखवा कर कसम भी खिलाई और छोट बेटी के सर पर हाथ भी रखवाई। पर सुकरा दा को सुगिया देवी न सुधार पाई।

सुबह “ठीक है अब नहीं पियूंगा “कह कर जाता और शाम को फिर पीकर चला आता। हां, कभी- कभी वह सप्ताह -दो सप्ताह ठीक ठाक रहता। लेकिन जैसे ही कमेनी पैसा हाथ में आता। उसका पीना फिर शुरू हो जाता था। थक हार कर सुगिया देवी ने पति को मना करना छोड़ दिया। अब तो हालत ऐसी हो गई थी कि सुकरा दा पीकर रास्ते में गिरा पड़ा रहता और लोग हंसते हुए आगे बढ़ जाते थे। कभी कोई घर में बोल देता,तब बड़ा या छोटा बेटा जो घर में होता,उठा ले आता। वहीं किसी किसी दिन देर तक कहीं गिरा पड़ा रहता और कुता उस पर मूत रहा होता या फिर मुंह चाट रहा होता। तो किसी दिन सुकरा दा गिरता पड़ता खुद घर पहुंच जाता और घर के बाहर देर रात तक अकर बकर बकता रहता था। दिनों दिन उस घर की हालत बिगड़ती जा रही थी।

उस रात भी सुकरा दा नशे की हालत में रास्ते पर पड़ा हुआ था। उसे अकेला छोड़ संगी साथी अपने अपने घर जा चुके थे। रात के दस सवा दस का वक्त था। मनमतिया अभी अभी किसी के साथ रातलीला कर घर लौट रही थी। तभी उसकी नजर सुकरा दा पर पड़ी। उसकी आंखें चमक उठी। रात रात भर जाग कर सुकरा दा जैसे मालदार आसामीयों से रूपए बटोरना ही उसका काम था। उस रात वह सुकरा दा को अपने घर लेते गई और अपनी जवान देह भी उसने उसे सौंप दी। किसी शराबी को देह और दारू जहां एक साथ मिल जाए वह जगह उसके लिए खासम खाश हो जाता है।

मनमतिया देह और दारू दोनों धंधे साथ-साथ करती थी। और इन दोनों में ही उसे महारत हासिल थी।

अब सुकरा दा का अधिकांश समय मनमतिया के घर में बीतने लगा। खाना-पीना, सोना -जागना सब मनमतिया के घर में होने लगा। इस कारण सुगिया देवी और मनमतिया के बीच कई बार झोंटा झांटी,लुगा- साया खींचा खांची हो चुकी थी। पर हमेशा मनमतिया ही सुगिया देवी पर भारी पड़ती। चुनौती देने वाली लहजे में कहती- ”तुम्हारा मरद है तो ले जाओ, मैंने उसे अपनी आंचरा में बांध कर नहीं रखा है..!"

सुगिया देवी धधकते अंगारों सा पति की ओर देखती,पर सुकरा दा पत्नी को अब देखना भी पसंद नहीं करता था। संगी साथियों के साथ मेल-जोल भी सुकरा दा का बंद हो चुका था। सबसे कटकर ही जैसे वह मनमतिया से जुड़ा था।

और एक समय ऐसा भी आया जब सुकरा दा ने मनमतिया के घर को ही अपना अड्डा (घर) बना लिया। मनमतिया भी सुकरा दा को रिझाने-बुझाने का हर प्रयास करती। तन और मन दोनों से काम लेती। अपने एक आंखा पति बिरन को वह अब कभी अपनी देह छूने भी नहीं देती, वहीं सुकरा दा को रातों भर अंकवारे रहती थी। अब तो सुकरा दा भी खूंटे से बंधे बैल की भांति उसी की चौखट पर सुबह-शाम हगने- मूतने लगा था। मनमतिया के पति बिरन को इन सब बातों से कोई लेना-देना नहीं था। गांजे की नशे में वह भकुआल (बेसुध) कहीं बाहर पडा रहता था।

गांव में सुकरा दा और मनमतिया के संबंधों की चर्चा के बिना जैसे हर चर्चा अब अधूरी होती थी। इस चर्चा का परिणाम यह निकला कि सुकरा दा यहीं से सबसे कटता चला गया। पहले परिवार से फिर रिश्ते-नातों से भी। मनमतिया को ही जैसे सुकरा दा ने सुख का अंतिम पड़ाव मान लिया था।

इसी तरह साल बीत गया। सुकरा दा फिर कभी घर नहीं लौटा। उसके घर में रोना धोना शुरू हो चुका था। घर वाले सभी अभाव का ओढ़ना ओढ़े घूमते नजर आते थे। छोटे बेटे की पढ़ाई छुट गई। बड़ा बेटा रमेसरा ठीकेदारी में काम करने निकल गया। सुगिया देवी अपना सुध-बुध खो बैठी। समय रहते सुकरा दा को बहुतों ने समझाया, कुछ ने चेताया भी। लेकिन उस पर कोई असर नहीं पड़ा। न सुधरने की जैसे उसने कसम खा ली थी।

तभी एक दिन उसे बड़े साहब के आफिस के बाहर खड़ा देख मैं चौंका था। ऐसी बात नहीं थी कि सुकरा दा मनमतिया को नयी पत्नी और सुगिया देवी को मृत घोषित करने आफिस चला आया था। मनमतिया साथ में थी भी नहीं। मेरे चौंकने का कारण था मेघलाल। यह वही मेघलाल था जो दस प्रतिशत की दर से लोगों को सूद में पैसे देता और कान पकड़ कर वसूलता था। एक नम्बर का सूदखोर था मेघलाल। सूद की जाल में फंसाकर अब तक दर्जन से अधिक लोगों को वह गोल्डेन मरवा चुका था। सूद मूल का पैसा वसूलने वह उड़ीसा,गंजाम, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ तक जाता था।

बेटी की शादी में सुकरा दा ने मेघलाल से जो तीस हजार उधार लिए थे,साल भर में ही बढ़कर वह अस्सी हजार रुपए हो चुका था। सुकरा दा को यह कहां होश था। वह तो मनमतिया की रूप जाल में फंस कर कुएं का बेंग(मेंढ़क) बन चुका था।

गोल्डेन दिलवाने के मामले में मेघलाल पूराना खेलाड़ी तो था ही, इस बार उसने मनमतिया को भी साथ मिला लिया था।

मेघलाल मनमतिया का पूराना ग्राहक था। उसने बड़े साहब को पांच हजार एडवांस पेशगी देकर सुकरा दा के गोल्डेन की स्वीकृति ले ली और सुकरा दा को बता दिया कि बड़े साहब को दस हजार में उसने मना लिया है।

मैं उसी शाम को सुकरा दा के घर पहुंचा और जो कहना चाहा, जो कुछ समझाना चाहा ,कह और समझा आया, मां - बेटों को। यह भी कहा कि कल आफिस में आओ, तुम लोग चाहोगे तो आवेदन देकर सुकरा दा का गोल्डेन रूकवा सकते हो..!

“नौकरी उसकी है,जो चाहे वो करें,हम नहीं जाएंगे..!”रमेसरा ने कहा था।

“मैं तो उसी दिन अपनी मांग की सिंदूर धो ली थी जिस दिन अपना मरद उस भैंसिया के घर जा घुसा था। उसे जो करना है करें, हम भूखों मर जाएंगे पर अब उसका गोड नहीं पकड़ेंगे..!” सुगिया देवी का मन आहत था।

मैं निराश लौट आया। दुःख हुआ, चाहते हुए भी एक लूटते, डूबते परिवार की मदद न कर पाया था।

खैर, खेल जारी था। सुकरा दा का गोल्डेन स्कीम (स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना)का फार्म सप्ताह दिन तक बड़े साहब की टेबुल पर पड़ा रहा। शायद मेघलाल ने माल साहब तक नहीं पहुंचाया था। और अपने साहब की खासियत थी, बिना माल पकड़े कलम नहीं चलाते थे। चार साल पहले जब वो इस कोलियरी में आए थे तब उनके पास एक पुरानी मोटरसाइकिल थी। आज वो मारूति कार से आफिस आना जाना करने लगे थे, उन्हीं गोल्डेन के पैसों से !

मेघलाल सुकरा दा का काम करवा चुका था। यानि अपने अस्सी हजार रुपयों का बंदोबस्त ! इधर दो दिन बाद ही सुकरा दा को गोल्डेन स्कीम के तहत रिटायरमेंट का आदेश पत्र मिल गया और सप्ताह दिन बाद गोल्डेन का “चेक“ भी मिल गया। कुल एक लाख पंचानबे हजार रुपए ! लाख मिलने पर ही लोग लखपति कहलाने लगते हैं । यहां तो पांच हजार कम दो लाख रकम हाथ में आ गया था।

चेक भुनाने के बाद मेघलाल ने अपना हिसाब - पतर सुकरा दा के सामने रखा -”मूल सूद मिला कर कुल अस्सी हजार रुपए मेरे बनते हैं। पंद्रह हजार और अलग से चाहिए..!"

“वो किस लिए..?” शुतुरमुर्ग बनते हुए सुकरा दा ने पूछा।

“अजीब आदमी हो,अरे भाई,बड़े साहब को दस हजार देना पड़ा,चेक पास करने वाला बाबू को एक हजार, एरिया के बड़े साहब को दो हजार और कैशियर को दो हजार, अब बोलो पंद्रह हजार हुए कि नहीं ...?"

मेघलाल ने सुकरा दा को साफ साफ समझा दिया। तभी सूंघते-सांघते जूठन साव भी वहां आ पहुंचा -”भाई, अब तो तुम काम से बैठ गया, मेरा भी हिसाब कर दो, बाद में किससे मांगता फिरूंगा - ज्यादा नहीं, पांच हजार ही होता है ..!"

“यह कैसी बेईमानी है सेठ जी ? आपका पांच हजार कैसे हो गया ? दो हजार ही तो बाकी था..!"

“कमाल की बात है भाई,खिलाओ भी और गिनाओ भी ! जूठन साव का मुंह जले हुए कड़ाही की तरह हो गया था -” अरे, जब तुम अपने घर में रहता था,तब रमेसरा की मां आकर समान-पतर ले जाती थी। फिर जब से मनमतिया के घर में तुम रहने लगा,उस बकत से मनमतिया तुम्हारे नाम से राशन ले जा रही थी। अब और क्या बताऊं...?” जूठन साव के स्वर में शर्म जैसी कोई बात नहीं थी।

“लो, तुम भी ले ही लो- पांच हजार ! किसी का उधार बकाया न रहे ..!”सुकरा दा ने कहा और सेठ को भी पांच हजार दे दिया था।

लूटे - पिटे कदमों के साथ सुकरा दा ने गांव में कदम रखा तो सहसा उसके कदम ठिठक गए थे। वह यह तय नहीं कर पा रहा था कि उसे जाना कहां है। बाकी बचे उन पैसों का क्या करे , किसके हाथ धरे ! गली जहां से शुरू होती थी, पांच घर के बाद खुद उसका अपना घर था। जहां उसकी पत्नी और दो बेटे के अलावा एक बहू और एक पोता भी रहता था। वे लोग भी उसकी राह देख रहे होंगे- शायद नहीं भी !

गली के दूसरे छोर पर मनमतिया का घर था। मांस भात बना कर वह सुकरा दा का बेसब्री से इंतजार कर रही थी और उसे खुद पर विश्वास था कि सुकरा उसी के पास पहुंचेगा उसके बिना रह नहीं सकेगा..!

सुकरा दा अब भी काठ की तरह खड़ा था !

“क्या सोच रहे हो सुकरा ? अपने घर में इंतजार करने वाला कोई नहीं है। भूल गया”वह मेरे लिए मर चुका है, मैं रांड हो चुकी हूं..!”

“ऐसे बाप का मर जाना ही अच्छा है..!”पैसे के अभाव में रमेसरा की बेटी बीमारी में चल बसी थी। तब उसके मुंह से यह गुस्सा फूटा था।

सुबह होने में अभी देर थी। लोगों का जगना अभी शुरू नहीं हुआ था। कि तभी मनमतिया की चीख ने एक बारगी सभी को जगा दिया था। वह अब भी चीख चिल्ला रही थी “इ बुढ़वा बेसरमाहा को देखो तो जरा, साल भर से हमहीं खिलाती पिलाती रही,इस आस भरोसे से कि रिटायर करेगा तो हमको भी कुछ देगा । इसे हमारा जरा भी याद नहीं रहा। सुना गोल्डेन में ढेर सारा पैसा मिला। सब मेघललवा को दे आया, हमको फूटी कौड़ी भी नहीं। अब इस पतर चटवा के लिए हमर घर में कोई जगह नहीं है..जा निकल यहां से ..!”और उसने सचमुच में सुकरा दा को घर से धकिया कर निकाल दी थी।

सुकरा दा बार बार लोगों से यह कहते रहे कि मनमतिया ने उसके साठ हजार रुपए लूट ली है। ईमानदारी पर दुकानदारी और विश्वास के दम पर परिवार चलता है। सुकरा दा ने दोनों खो लिया था।

किसी ने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया। काठ की हांडी में विश्वास का भात एक ही बार सिझता है। लोग उसकी बात पर सिर्फ हंसे और महीनों दिन तक हंसते रहे।

उस दिन के बाद सुकरा दा सप्ताह दिन तक गांव में नजर नहीं आया। कहां गया किसी को कुछ पता नहीं न किसी ने उसकी कोई खोज खबर ली। जिंदा है या मर गया,यह जानना भी किसी ने जरूरी नहीं समझा। गांव समाज से बदनाम आदमी का यह सबसे बदनुमा चेहरा होता है। बाकी बचे रूपए मनमतिया के हाथों लूटा कर अपने घर जाने की सुकरा दा में हिम्मत नहीं बची थी। और मनमतिया के त्रियाचरित्र के आगे वह चित हो चुका था।

उस शाम कहीं से वह अचानक मनमतिया के घर आ धमका। सामने उसे खड़ा देख वह चीख पड़ी “तुम यहां क्यों आया ? तुम्हारे लिए अब इस घर में कोई जगह नहीं ..!"

“जानता हूं। मैं कंगाली आदमी बन चुका हूं। और यह सब तुम्हारी मेहरबानी से हुआ है। हम जैसे कंगाली आदमीयों का दुनिया में भी बैठने का कोई जगह नहीं होता। फिर भी आज की रात तुम्हारे साथ रहना है मुझे..!"

"नहीं, तुम्हारे साथ अब एक पल भी नहीं..!"

"क्यों, अब गंध मारने लगा हूं ? बस आज की रात...!"सुकरा दा ने उसकी बांह पकड़ ली। सख्त पकड़ से मनमतिया कांप उठी, कहा "ठीक है केवल आज की रात..!"और वह किवाड़ अंदर से बंद करने लगी।

रात के ठीक एक - डेढ़ के बीच उस घर से एक दर्दनाक चीख बाहर आई। फिर सब कुछ शांत हो गया। जैसे तेज रफ्तार ट्रेन के आगे किसी ने अपनी मूंड़ी रख दी हो ।

वह सर्दियों की एक सुबह थी। कुहासा फैला हुआ था चहुंओर। सूरज ठिठका ठिठका सा कुहासे को चीरता हुआ ऊपर उठ रहा था। अब तक मनमतिया के घर के बाहर भीड़ काफी जमा हो चुकी थी। सबकी जुबान पर "यह कैसे हुआ ..?" का सवाल टंगा हुआ था। और अंदर रस्सी के फंदे से सुकरा दा टंगा हुआ था। उसी के बांई ओर थोड़ी दूरी पर मनमतिया की सिर कटी "लाश" पड़ी हुई थी। और सामने ही खून से सना एक "फरसा" पड़ा हुआ था।

श्यामल बिहारी महतो
बोकारो, झारखंड
फोन नं 6204131994, Email - shyamalwriter@gmail.com